।। ईशावास्योपनिषद ।।

वेदों के संहिता, ब्राह्मण आरण्यक और उपनिषद ऐसे ४ प्रभाग है । सबसे अंतिम क्रम होने के बावजूद भी उपनिषद को तत्त्वज्ञान–मंदिर का शिखर मानते है । केवल १८ मंत्रों का यह उपनिषद है तो सान किंतु आशय में है महान । शुक्लयजुर्वेदके वाजसनीय संहिता का ४० वा अध्याय माने हमारे हृदय ग्रंथि में स्थित अविद्या का निर्मूलन करनेवाला है ईशावास्योपनिषद ।

इस उपनिषद का पहला ही मंत्र आत्मविवेकी मानव को मुग्ध करता है – तत्वज्ञान और आशयप्रधान होने के कारण यह निम्नलिखित मंत्र केवल अलौकिक है –

ॐ ईशावस्यमिंदं सर्वं यत्किंच जगत्यां जगत् ।

तेन त्यक्तेन भुण्जीथा मा गृध: कस्य स्विद्धनम् ।।१।।

अर्थ है, इस विश्व के कणकण में ईश्वर वास है, जिसे गवाह मानकर, त्यागपूर्ण भोग का अवलंब करो । भगवान भी गीता में यही सूचित करते हैं ।

ममैवांशे जीवलोके जीवभूत सनातन: ।।

विश्व के ही परमाणु में स्थित मेझॉन, न्युट्रिओ, टॅकियान, आदि के कारण समूचा विश्व गतिमान है । गगनभेदी पर्वत श्रंखलायें, कलकल निनादिनी, बिलखती, सरितायें, अपनी घन विस्तृत छाया से पांथस्थोंकी, तपन दूर करनेवाले निरपेक्ष परोपकारी वृक्षवृन्द, फूलोंपर थिरकती तितलियाँ भोरमें चहकनेवाले खगगण, वर्षा की बूँदो से प्रमुदित चातक, मयूर आदि सभी चित्ताकर्षक हैं, क्योंकि उनमें है ईश्वर का वास इसीलिये हमारे हितकारक समस्त प्राणियों के प्रति सौहाद्रपूर्ण व्यवहार करने की प्रेरणा देता है यह महान उपनिषद ।

सभी मानव, पशुपक्षी आदि जीवित प्राणियों में स्थित ईश्वर की उपासना करनेकी शिक्षा देनेवाला उपनिषद बताता है कि, दूसरोंका मत्सर, अहित चाहना उनको दु:ख देना, दूसरोंका वित्त, दारा, अन्य वस्तुओं का कपटसे अपहरण, खूनखराबा व्यभिचार आदि मार्ग अपनानेसे हम खुद ही अपने हाथों से अपने पैरोपर कुल्हाडी मारते हैं । ऐसे आसुरी प्रवृत्तिवाले मनुष्य अपने, नीच पापभरे कर्मों के कारण नीच योनि में, पुनरपि जननं, पुनरपि मरणं जाने में बाध्य होते हैं ।

प्रथम मंत्र बताता है कि, जगत् की वस्तुओं का उचित उपयोग करो मगर लालसा से उनका संग्रह (परिग्रह) मत करो । अन्याय से दूसरों की वस्तुएँ छीननेवाले समाजकंटक कहलाते हैं । व्याधिग्रस्तों की सहायता, दीनदुबलोंकी मदद, बेसहारों का सहारा बनना ही हमारी जीवन मनीषा होनी चाहिये । ज्ञानेश्वरजी कहते हैं, जें जें भेटे भूत तया मानी भगवंत गत जन्मोंके संचित कर्मोंको फलाशा छोड़कर उन्हें ईश्वर को समर्पित करने से ही हम बंधन से (जीवन–

मरण) मुक्त हो सकते हैं । आप जरूर संसार में रहो किन्तु इतने लिप्त न बनो कि अपने सत्य स्वरूप को खोजना ही भूल जाये । नाँव पानी में रहे किन्तु उसमें जल न आयें ।

हमारा जीवन है, क्षणिक पानी का बुदबुदा हम नहीं जानते की, मृत्यु की भयावह घंटी कब बजेगी इसलिये यह उपनिषद हमें शिक्षा देता है कि इस अमूल्य देह का प्राप्त क्षण का सदुपयोग करो क्योंकि, ''आला क्षण गेला क्षण'' जलद गति से घुमनेवाला संसार चक्र हमें भी चक्राकार घुमाता है. हम, बेसहारा कठपुतलियाँ हमें नचानेवाली प्रचंड शक्ति के कारण जीवन–मृत्यु तक अशाश्वत वस्तुओं में व्यर्थ ही सुख ढूँढते रहते हैं । कबीरजी कहते हैं – ''मोको कहाँ ढूँढे, में तो तेरे पासमें ।।'' जिन खोजा तिन पाईयाँ हमारे ही शरीर में स्थित आनन्द, परमात्मा की तलाश में दर दर भटकते रहते हैं ।

दूसरे मंत्र में यह उपनिषद हमें, शतायुषी बननेका हौसला देता है आप जियो हजारों साल मगर सत्य, सदाचरण, का सहारा लेकर तीसरा मंत्र बताता है कि, शारीरिक तथा मानसिक दुर्बलता, आत्मघात, नैराश्य में जीवन व्यतीत करनेवाले, मृत्यु पश्चात, असूर्या नामक नरकासमान आसुरी लोगोंमें जन्म लेते हैं

चौथा मंत्र वर्णन करता है ईश्वर महिमा आत्मतत्व अविचल अकंपनीय, सर्वव्यापी, स्थिर, सूक्ष्म है इस जगत् के सभी चेतन पदार्थ शीघ्र गति से विनाश की ओर बढ़ते हैं यह धरती भी प्रलयधारा में नष्ट होगी इसलिये दुनियाकी क्षणभंगुर, विनाशी वस्तुओं में लिप्त न होकर उनमें स्थित असीम ईशतत्व को पहचानो, उसका चिन्तन करो, और उसे प्राप्त करो यही तुम्हारे नर–देह का स्तुत्य ध्येय

''पराधीन आहे जगती पुत्र मानवाचा''

एक महात्मा कहते हैं कि,

गते शोको न कर्तव्यो भविष्य नैव चिन्तयेत् ।

वर्तमानेन कालेन प्रवर्तते विचक्षणा: ।।

भूत में गाडे हुये मुर्दे मत उखाड़ो न भविष्यकी चिन्ता करो चित्ता तो एकही बार हमारे शरीर को भस्म करती है मगर चिन्ता हमें जीवनभर दहलाती रहती है । आगे चलकर यह उपनिषद हमें प्रेमभरे, करुणायुक्त, मार्गपर चलनेकी सलाह देता है मत्सर, द्वैत भावना, शोक, मोह, क्रोध आदि घातक प्रवृत्तियों से अछुते रहनेका उपदेश देता है ।

गीता में भगवान बताते हैं —

विद्याविनयसम्पन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि ।

शुनि चैव श्वपाके च पण्डिता: समदर्शिन: ।। ५/१८

विद्वान ब्राह्मण, हाथी, कुत्ते, और चाण्डालमें भेद करते नहीं वैसे ही अपने द्वैत भाव की आहुति प्रेमाग्निमें देनेवाले को ना शोक रहता है, ना मोह ऐसा स्थिप्रज्ञ मनुष्य, सभी वस्तुओं में ईशतत्त्व की अनुभूति करता है मृत्यु का अर्थ है, नवजीवन पुराने, जीर्ण, जराजर्जर शरीर का त्याग और नये चेतनाभरे देह का आगमन

वासांसि जीर्णानि ..... विहाय जीर्णा ।। गीता २/२२

इस उपनिषद का अंतिम उद्देश्य है कैवल्यप्राप्ति विज्ञान हरदम अविदित, आच्छादित, अज्ञात वस्तुओंका रहस्य खोलता है । ब्रह्माजी का सत्यस्वरुप भी ऐसे ही ज्योतिर्मयी, हिरण्यमयी आवरण से ढँका है, असत्यधर्मी साधक इसी बाह्यसौंदर्य से मोहित होकर मायारुपी संसार की ओर आकृष्ट होता है किन्तु महान तपस्वी शंकराचार्यजी इस विश्व को ''ब्रह्मसत्यं जगत्मिथ्या'' मानते हैं । भोगविलास में खोकर मानव अपना सत्य आनन्दमय स्वरुप को भूल जाता है । आशा का धुँधलासाकिरण भी भोगी दुनिया में अगली सीढ़ी चढ़नेको उद्युक्त करता है और वह चलता ही रहता है, चलता ही है, अन्ततक निर्वाणनक

मनुष्याणां सहस्त्रेषु कश्चिद्यतति सिध्दये ।

यततामपि सिध्दानां कश्चिन्मां वेत्ति तत्त्वत: ।। गीता ७/३

हजारों में एखादा ही उसकी प्राप्तिके लिये प्रयत्न करता है और उनमेंसे एखादा ही उस यथार्थ रुपको जानता है । साधारण मानव अपनी आँखोपर पट्टी बाँधकर, अपना श्रेयस भूलकर कुकर्मों की खाई में पड़ता है, बडे प्रयास से उठता है, लड़खडाकर फिर गिरता है । ऐसे न जाने कितने करोडों जन्म व्यर्थ गँवाता है ।

एक म्यान में जैसे २ तलवारें असम्भव, उसी प्रकार काम और राम साथ में होना अतवर्य । इस कलियुगमें नामस्मरण, प्राणायाम, ध्यान, प्रत्याहार ही उस बंद तालेको खोल सकता है ।

अन्त में, यह उपनिषद ईशतत्त्व का अनुसंधान करनेवाला महत्त्वपूर्ण मंत्र व्यक्त करता है ।

वायुरनिलममृतमथेदं भस्मान्तं शरीरम् ।

ॐ क्रतो स्मरकृतं स्मर कृतं स्मर ।।१७।।

आत्मस्वरुप का सत् परिचय होने के उपरान्त साधक को मृत्यु, शोकान्तिका का परमोच्च बिंदू न होकर अमर अस्तित्व का अनंददायी शुभारंभ नूतन जीवनका पहला किरण भासमान होगा । इस मोहमयी दुनियाकी क्षणजीवि आकर्षक विषयोंको हमेशा भूलकर वह साधक ईशप्राप्तिसे, आनंदसागर में विभोर होकर नाचने लगेगा । और साथ ही साथ —

सर्वेऽत्र सुखिन: सन्तु सर्वे सन्तु निरामया: ।

सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चित् दु:खमाप्नुयात् ।।

सभी लोगोंकी सुख शान्ति की कामना करता हुआ अपने नूतन रास्तेपर फूर्ति ये पदक्रमण करता है ।

ॐ शान्ति : । शान्ति: । शान्ति: ।।

संदर्भ ग्रंथ –

१) ईशावास्योपनिषद = चिन्मयानंद – पूरापुस्तक (सारांश रूप में)

२) गीतासागर = शंकर अभ्यंकर

३) भारतीय आचार्य = भक्तिकोश – विद्यावाचस्ती शंकर अभ्यंकर उपनिषदे, पान : ३८०

प्रेषक : मालती दामले

चन्द्रवदन, १ डी/२१६ गणेशवाडी

ठाणे (पश्चिम) पिन–४००६०१

दुरध्वनी– २५३४५२७८